रामचरितमानस में मंगलाचरण

प्रो. (डॉ.) सरोज कौशल
संस्कृत विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

रामचरितमानस महाकवि तुलसीदासकृत एक ऐसा काव्य है, जिसमें भक्ति और प्रेम कर्त्तव्य के रूप में अथवा कर्मयोग के रूप में अभिव्यंजित होता है। तुलसीदास ने मानस के सातों काण्डों का प्रारम्भ संस्कृत भाषा में रचित मंगलाचरण से किया है। ग्रन्थ की निर्विघ्न परिसमाप्ति के लिए मंगलाचरण किया जाता है। यह मंगलाचरण तीन प्रकार का होता है -

1. नमस्कारात्मक, 2. आशीर्वादात्मक एवं 3. वस्तुनिर्देशात्मक।

अपने अभीष्ट देवता के प्रति वन्दना करना नमस्कारात्मक मंगलाचरण कहलाता है। श्रोतृवृन्द अथवा दर्शकवृन्द के प्रति देवता के आशीर्वाद की अभिलाषा आशीर्वादात्मक मंगलाचरण के अन्तर्गत आता है। कथावस्तु से ही ग्रन्थ का शुभारम्भ करना वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण कहलाता है। मानस के प्रत्येक काण्ड में प्रायः नमस्कारात्मक मंगलाचरण प्राप्त होता है।

हमारी पौराणिक मान्यता है, कि निर्विघ्नता के कर्ता गणेश हैं और विद्या की अधिष्ठातृ देवता सरस्वती हैं। इन दोनों की स्तुति करते हुए कवि तुलसी कहते हैं -

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि ।।
मंगलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ ।।[1]

वर्णों, अर्थसमूहों, रसों, छन्दों और मंगलों के कर्त्ता सरस्वती तथा विनायक की मैं वन्दना करता हूँ। सरस्वती का सम्बन्ध वर्ण, अर्थ, रस तथा छन्द से साक्षात् ही दृष्टिगोचर होता है, जबकि विघ्नविनाश के द्वारा मंगलकर्ता गणेश ही प्रतीत होते हैं। नमस्कारात्मक मंगलाचरण से देवद्वय की स्तुति सोपपत्तिक ही है। प्रकारान्तर से कवि ने अपने

काव्यशास्त्र के उपकरणों का संकेत भी कर दिया है। शब्द, अर्थ, रस तथा छन्द-इन चारों की मानस-रचना में विशेष अपेक्षा होगी तथा लोकमंगल ही इस काव्य का प्रयोजन है।

तुलसीदास ने अपने आराध्य राम तथा शिव का नाना प्रकार से वन्दन किया है। उन्होंने अपनी भक्ति को प्रकट करते हुए अनेक दार्शनिक सिद्धान्तों का भी संकेत किया है। जिस प्रकार राम परिवर्तनहीन एकमात्र सत्ता है, उसी प्रकार सीता उनकी चिन्मयी शक्ति है। राम और सीता की अभिन्नता को तुलसी ने स्पष्ट करते हुए कहा है-

गिरा अरथ जलवीचि सम।
कहियत भिन्न न भिन्न।।

सीता राम की परा शक्ति हैं, जिन्हें माया भी कहा गया है। राम तथा सीता का दाम्पत्य जिस प्रकार का आदर्श प्रस्तुत करता है, उसी प्रकार का आदर्श पार्वती तथा शिव के दाम्पत्य में दृष्टिगोचर होता है, तभी तो तुलसीदास शिव और पार्वतीजी की स्तुति में लीन होकर कहते हैं-

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धा: स्वान्त:स्थमीश्वरम् ।।

अर्थात् श्रद्धा और विश्वास स्वरूप श्रीपार्वती जी और श्रीशंकर की मैं वन्दना करता हूँ, जिनके बिना सिद्धजन अपने अन्तःकरण में स्थित ईश्वर को नहीं देख सकते। शिव ओर पार्वती बोधमय हैं - सम्पूर्ण शब्दज्ञान पार्वती के अधीन हैं तथा सम्पूर्ण अर्थज्ञान शिव के अधीन हैं। इसी कारण तुलसीदास भवानी और शंकर की आराधना करते हैं।

भगवान् शंकर का आश्रय लेकर वक्र चन्द्रमा भी सर्वत्र वन्दित होता है। इस दृष्टान्त से यह ध्वनित होता है कि शंकर का आश्रय लेने पर व्यक्ति उदात्त चरित्रवान् हो जाता है। उसके दोष भी नष्ट हो जाते हैं।

तुलसी पूर्वपरम्परा के आचार्यों के ऋण को सहर्ष स्वीकार करते हैं और भक्तशिरोमणि हनुमान् के प्रति उनका वन्दन वस्तुतः सर्वथा प्रासंगिक है। श्रीसीताराम के गुणसमूहरूपी पवित्र वन में विहार करने वाले, विशुद्ध विज्ञान-सम्पन्न कवीश्वर वाल्मीकि और कपीश्वर श्री हनुमान् की मैं वन्दना करता हूँ। कवीश्वर की वन्दना इसलिए की गयी कि वे आदिकवि हैं। जिस रम्या रामायणी कथा को वाल्मीकि ने 24000 श्लोकों के माध्यम से प्रस्तुत किया, उसी विषयवस्तु को तुलसीदास रामचरितमानस में अवधी भाषा के द्वारा अमर कर रहे हैं। कपीश्वर अपनी निष्ठा तथा भक्ति के द्वारा

श्रीसीताराम जी के गुणसमूहरूपी पवित्र वन में विहार करते हैं। भक्ति का अनुपम उदाहरण हनुमान् के रूप में परिलक्षित होता है।

सीताराम-गुणग्राम-पुण्यारण्य-विहारिणौ ।
वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ।।

सीता की स्तुति करते हुए तुलसी समस्त दार्शनिकता का ताना-बाना बुन देते हैं। उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय को करने वाली, क्लेशों को हरने वाली तथा सम्पूर्ण कल्याणों को प्रदान करने वाली राम की वल्लभा सीता की मैं वन्दना करता हूँ। संसार के समस्त क्लेशों को हरती हुई सर्वश्रेयस्करी के रूप में जगज्जननी सीता की स्थापना उनके पूरे चरित्र को दो पदों में ही व्याख्यायित कर देती है।

सीता की वन्दना पूर्व में और राम की वन्दना उसके पश्चात् की गयी है। ब्रह्मादि देवता और असुर जिनकी माया के अधीन हैं, जिनकी सत्ता से रस्सी में सर्प के भ्रम की भाँति यह सारा दृश्य जगत् सत्य ही प्रतीत होता है, जिनके केवल चरण ही भवसागर से तरने की इच्छा वालों के लिए एकमात्र नौका हैं, उन सब कारणों के कारण और श्रेष्ठ राम नाम वाले भगवान् हरि की मैं वन्दना करता हूँ। राम को एकात्मवाद का मूल माना गया है। समस्त कारणों के कारण कहने से राम का कारणैकसत् भाव व्यंजित होता है।

कोई भी ज्ञान, वर्णन अथवा विषय शून्य से उत्पन्न नहीं होता, अपितु उसका उपजीवक शास्त्र पूर्व में विद्यमान रहता है। इसी तथ्य को तुलसीदास ने 'नानापुराण-निगमागमसम्मतम्' के द्वारा स्वीकार किया है। 'रघुनाथगाथा' गाने का सबसे महनीय प्रयोजन है - 'स्वान्तःसुखाय'। जो अपने अन्तःकरण को सुखप्रदान करेगा वह लोकसुख का तो अवश्यमेव आधान करेगा।

वस्तुतः जो अवधारणा मूल से सम्बद्ध होती है, वही मौलिक कहलाती है। इस रूप में तुलसी उस मौलिकता का संकेत भी यहाँ करते हैं। भारतीय परम्परा में आगम प्रमाण के प्रति अगाध श्रद्धा परिलक्षित होती है। हमारी ऋषि-परम्परा तथा आचार्य-परम्परा ने जो अनुभव-प्रसूत ज्ञान शास्त्रों के माध्यम से प्रसारित किया है, वह हमारे लिए प्रामाणिक है तथा वह हमारे सर्जनात्मक मार्ग को प्रशस्त करता है, यही प्राचीन काव्य की उपजीव्यता है।

'श्री शंकर: पातु माम्' - वे श्रीशंकर मेरी रक्षा करें। यह आशीर्वादात्मक मंगलाचरण है। श्रीशंकर के विशेषण उनकी आकृतिद्वय को रेखांकित करते हैं। उनके अंक में सीता सुशोभित हो रही है, मस्तक पर गंगा, भाल पर चन्द्रमा,

कण्ठ में विष तथा वक्ष:स्थल पर सर्प सुशोभित हैं। भस्म से विभूषित, देवताओं में श्रेष्ठ, सर्वेश्वर, पापसंहारक, सर्वव्यापक, कल्याणरूप, शशि के समान शुभ्र श्रीशंकर मेरी रक्षा करें। श्लोक के अर्ध अंश में शिव के शारीरिक स्वरूप का वर्णन है तथा उत्तरार्ध में अन्तः स्वरूप का वैशिष्ट्य निरूपित किया गया है।

श्रीराम में स्थितप्रज्ञता का उत्कर्ष परिलक्षित होता है। श्रीरामजी के मुख की शोभा राज्याभिषेक के समय न तो प्रसन्नता को प्राप्त हुई और न ही वनवास के दुःख से मलिनता को प्राप्त हुई। वह मुखकमलशोभा मेरे लिए सदा सुन्दर मंगलों को प्रदान करने वाली हो। श्रीरामचन्द्र का स्मितभाव सदैव एक-सा विद्यमान रहता है। दुःखों में अनुद्विग्न तथा सुखों में स्पृहारहित होना ही स्थितप्रज्ञता है और यह भाव राम को धीरोदात्त नायक की कोटि में स्थापित करता है।

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः।
मुखाम्बुजश्री रघुनन्दनस्य मे सदास्तु सा मंजुलमंगलप्रदा।।[2]

नीलाम्बुज-नीलकमल के समान श्यामल तथा कोमल शरीर वाले, वामभाग में सीता से सुशोभित, हाथों में विशाल बाण तथा धनुष से युक्त, रघुवंश के नाथ श्रीराम को मैं नमस्कार करता हूँ। श्रीराम के समुज्ज्वल तथा कठोर स्वरूप का एकत्र वर्णन हमें उनके लोकोत्तर चरित्र का दिग्दर्शन कराता है।

नीलाम्बुजं श्यामलकोमलांगं सीतासमारोपितवामभागम् ।
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम्।[3]

शंकरजी की वन्दना तुलसीदास जी पुनः पुनः करते हैं। भगवान् शंकर श्रीराम के अत्यधिक प्रिय हैं। वे राम के प्रिय क्यों हैं? इसका निरूपण करते हुए तुलसी ने कहा है-

धर्मरूपी वृक्ष के वे मूल हैं, विवेकरूपी समुद्र को आनन्दप्रदान करने वाले पूर्णचन्द्र, वैराग्यरूपी कमल को विकसित करने वाले सूर्य, पापरूपी घोर अन्धकार को निश्चय ही नष्ट करने वाले, मोहरूपी बादलों के समूह को छिन्न-भिन्न करने में सर्वथा समर्थ, स्वःलोकस्थ, ब्रह्मकुलज, कलंक का शमन करने वाले महाराज रामचन्द्र जी के प्रिय शंकर की मैं वन्दना करता हूँ।

भगवान् शंकर धर्म, विवेक, वैराग्य का संवर्धन करते हैं। पाप तथा तापत्रय के विनाशक हैं। आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक - ये तापत्रय हैं, इनसे मुक्त कराने के कारण ही भगवान् शंकर रामचन्द्रजी को प्रिय हैं।

समस्त राजाओं के शिरोमणि श्रीराम वेदान्त में निरूपित सर्वव्यापक ब्रह्म हैं। ब्रह्म का स्वरूप श्रीराम में परिलक्षित होता है। शान्त तथा शाश्वत अर्थात् सनातन स्वरूप में श्रीराम अप्रमेय हैं। प्रमाणों के द्वारा अथवा स्थूल इन्द्रियों के द्वारा उनको प्राप्त नहीं किया जा सकता। वे मोक्षरूपिणी परम शान्ति प्रदान करने वाले हैं। ब्रह्मा, शम्भु और शेष से निरन्तर सेवित हैं। उनकी सत्ता सर्वोपरि है। देवों के भी गुरु, राम नामक, जगत् के ईश्वर, माया के कारण मनुष्यरूप में दृष्टिगोचर होने वाले, करुणा के आकर रघुवर की मैं वन्दना करता हूँ। वन्दनीय पुरुष वह होता है, जो अनेक प्रकार के गुणों को स्वयं में सदैव समाहित कर लेता है। जिसका प्रायः सभी जन स्तवन करते हैं अथवा जिसके गौरव का अनुभव करते हैं। जिसके स्वभाव में अपार शान्ति होती है, किंचिदपि विचलन नहीं होता। ये समस्त गुण भगवान् श्रीराम में अनवरत विद्यमान रहते हैं, इसीलिए वे सभी के वन्दनीय हैं।

भक्त राम के चरित्र से इतने प्रभावित हो जाते हैं, कि मनोमालिन्यराहित्य हेतु भी अपने इष्ट से ही प्रार्थना करते हैं -

हे रघुपति! मेरे हृदय में सांसारिक भोगों के प्रति किसी भी प्रकार की कोई स्पृहा नहीं है। मैं सत्य निवेदन कर रहा हूँ। फिर भी आप तो अन्तरात्मा हो, हृदय के अन्तरतम को जानते हो। मुझे अपनी सम्पूर्ण भक्ति प्रदान करो। मेरे मानस को काम, क्रोध, लोभ, मोहादि से रहित कर दो। मनुष्य को सांसारिक जीवन में कामादि ही सर्वाधिक पीड़ित करते हैं। समस्त कल्मषों से जब अन्तर्मन रहित हो जाता है, तो भक्तियोग अनायास ही संचरित हो जाता है।

इस श्लोक में किसी भी देवता की स्तुति नहीं है। अपितु मानवमनपरिशुद्धि की सोपान-सरणि निरूपित की गयी है।

भक्तिं प्रयच्छ रघुपुंग निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।।[4]

राम की वन्दना जब लंकाकाण्ड के प्रारम्भ में की जाती है, तो वे कामशत्रु शिव के सेव्यरूप में निरूपित होते हैं। राम भव के भय को हरने वाले हैं। कालरूपी मदमस्त हाथी के लिए सिंह के समान हैं। योगियों में भी राम उत्कृष्ट योगी हैं। गुणों के निधिस्वरूप हैं। निर्गुण तथा निर्विकार हैं। यहाँ गुणनिधि कह कर राम के सगुण साकार रूप को रेखांकित किया गया है तथा निर्गुण कहने से सत्त्व, रजस् तथा तमस् का राहित्य बताया गया है। माया से परे, देवताओं के स्वामी, दुष्टों के वध में तत्पर, ब्राह्मणवृन्द के एकमात्र रक्षक, कमलनेत्र तथा पृथिवीपति राजा के रूप में श्रीरामजी की मैं वन्दना करता हूँ।

भगवान् शंकर का स्वरूप एक ओर तो अत्यन्त सौम्य है, दूसरी ओर भयानक भी। दोनों विषमताओं का एकत्र अवस्थान शिव में परिलक्षित होता है और यही भाव उन्हें लोकोत्तर बनाता है। शङ्ख और चन्द्रमा की सी कान्ति के कारण सुन्दर शरीर वाले, व्याघ्रचर्म से आच्छादित, काल के समान भयानक सर्प को धारण करने वाले, गंगा तथा चन्द्रमा के प्रिय, काशीपति, कलियुग के पापसमूह का नाश करने वाले, कल्याणों के कल्पवृक्ष, गुणों के निधान और कामदेव को भस्म करने वाले पार्वतीपति श्रीशंकर जी को मैं नमस्कार करता हूँ।

कुमारसम्भवम् नामक महाकाव्य में शिव के विषय में कहा गया है -

न सन्ति याथार्थ्यविदः पिनाकिनः।

शिव के यथार्थस्वरूप को जानने वाले नहीं हैं, क्योंकि शिव गंगा और चन्द्रमा के कारण शीतलता का भान कराते हैं और व्याघ्रचर्म तथा सर्पों के कंगन के कारण भयंकर प्रतीत होते हैं। वे कल्याणों के कल्पवृक्ष हैं तो दूसरी ओर कामदेव के हन्ता हैं। उनका शंकरत्व और भयंकरत्व रूप एकत्र ही विराजता है।

शिव के आशीर्वाद को सज्जन ही प्राप्त करने में समर्थ हैं, न कि दुर्जन। जो शिव सत्पुरुषों को दुर्लभ कैवल्यमुक्ति भी प्रदान कर देते हैं और जो दुष्टों को दण्ड भी देने वाले हैं, वे कल्याणकारी शंकर मेरे कल्याण का विस्तार करें। शंकर की कृपा पाने का अधिकारी वही है, जो सज्जन होता है।

शंकर की कवि पौनःपुन्येन स्तुति करता है। कुन्द के फूल, चन्द्रमा और शङ्ख के समान सुन्दर गौरवर्ण, जगज्जननी श्रीपार्वती जी के पति, अभिलषित फल के प्रदाता, दया करने वाले, सुन्दर कमल के समान नेत्रवाले, कामदेव से मुक्ति कराने वाले भगवान् शंकर को मैं नमस्कार करता हूँ।

श्रीराम को हम निरन्तर नमस्कार करते हैं। वे श्रीराम अनेक ऐसे विशेषणों से सुशोभित हैं, जो अनिर्वचनीय हैं। तुलसी का अभिप्राय यह है, कि श्रीराम के जितने विशेषणों का कथन करते हैं, उससे भी कहींअधिक अवशिष्ट रह जाते हैं। प्रत्येक क्षेत्र में वे उत्कर्ष के प्रतिमान प्रतीत होते हैं, इसीलिए ईड्य अर्थात् स्तुत्य हैं।

वे मयूर के कण्ठ के समान नीलवर्ण वाले तथा देवताओं में श्रेष्ठ हैं। देवता तो स्वयं श्रेष्ठता की ही संज्ञा है। उनमें भी श्रेष्ठ होना राम को श्रेष्ठता के निकषरूप में स्थापित करता है। वे राम भृगु के चरणकमल के चिह्न से सुशोभित हैं 'विप्रपादाब्जचिह्नम्' यह विशेषण तुलसी ही गढ़ सकते हैं। शोभा से वे परिपूरित हैं। यह शोभा कृत्रिम नहीं है, अपितु

नैसर्गिक है। जिस शोभा से राम सुशोभित हैं, वह शोभा अन्तःस्थित गुणसमूह से उत्पन्न होती है। पीतवस्त्रों से राम की तेजस्विता लक्षित होती है। कमल के समान नेत्र हैं, इस 'सरसिजनयनम्' विशेषण पद से राम के नेत्र तथा उनकी दूरदर्शिता का सौन्दर्य हमें आन्दोलित करता हैं। वे सर्वदा परम प्रसन्न रहते हैं। उनकी प्रसन्नता किसी परिस्थितिविशेष अथवा किसी कालविशेष से नियंत्रित नहीं हैं, अपितु उनकी प्रसन्नता तो सर्वदा समरेख है।

श्रीराम का क्षत्रबल भी श्लाघनीय है। दण्ड-योग्यों को दण्डित करने के कारण वे बाण और धनुष से सुशोभित हैं। वे एकाकी नहीं हैं, अपितु कपिसमूह से युक्त हैं। वे बन्धु (भ्राता लक्ष्मण) से सेवित हैं। कपिसमूह तथा भ्राता लक्ष्मण से सेवित होने पर यह व्यंजित होता है, कि श्रीराम राजा होने पर भी जन-जन से अभिनिवेश रखते थे। वे जानकीजी के पति हैं और पुष्पक विमान पर आरूढ हैं। ऐसे श्रीराम की मैं अहोरात्र वन्दना करता हूँ। श्रीराम अपनी शारीरिक छवियों से भी आकर्षित करते हैं तथा अपने आचरण-सौन्दर्य से तो वे जीवन-दर्शन को ही स्थापित कर देते हैं।

श्रीराम के चरणकमलों में चिन्तकों का मन-रूपी भ्रमर सदा बसा रहता है। श्रीराम के सुन्दर और कोमल दोनों चरणकमल ब्रह्माजी और शिवजी के द्वारा वन्दित हैं। 'अजमहेशवन्दितौ' यहाँ ब्रह्मा के लिए 'अज' शब्द का प्रयोग सार्थक है। जो अजन्मा है तथा सम्पूर्ण सृष्टि का सर्जक है। अनायास ही इससे विरोधाभास ध्वनित होता है। श्रीजानकीजी के करकमलों से जो चरणकमल दुलराये गये हैं, उन चरणकमलों में चिन्तकों का मनरूपी भ्रमर सदा बसा रहता है। रूपक का बहुत सुन्दर प्रयोग तुलसी करते हैं।

दाशरथि राम को तुलसी ब्रह्म ही मानते हैं। इस प्रकार निर्गुण ब्रह्म राम, सगुण ब्रह्म राम और दाशरथि राम वस्तुतः एक ही हैं। ज्ञानी का लक्ष्य निर्गुण ब्रह्म राम है, भक्त सगुण ब्रह्म राम के नैकट्य का आनन्द प्राप्त करना परम तत्त्व समझता है और दाशरथि राम के रूप में उनके रूप, गुण और ऐश्वर्य का ध्यान करता है। तीनों में नाम की समानता है।

तुलसी ने राम को दशरथ के पुत्र राम से उठा कर सर्वोपरि चिन्मय ब्रह्म बना दिया है। इसलिए जहाँ राम में सर्वश्रेष्ठ मानवीय गुण हैं, वहीं ऐसे दैवी गुण भी हैं, जो भक्त की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। ये गुण हैं -1. भक्तवत्सलता,2. शरणागतवत्सलता, 3. दयालुता एवं 4. अमित ऐश्वर्य।

इनके अतिरिक्त भक्त की भावना के विकास की दृष्टि से भगवान् का अलौकिक शील और अलौकिक सौन्दर्य भी महत्त्वपूर्ण है। तुलसी ने रामचरितमानस में इन समस्त गुणों को स्वतंत्र-रूप से या कथारूप में पिरो कर विशद रूप से हमारे सामने उपस्थित किया है। उनका मानस राम के गुणगान और ध्यान का भण्डार है।

तुलसी के काव्य में जो स्तुतियाँ की गयी हैं, उनमें तुलसीदास की भक्तिभावना दो प्रकार से प्रकाशित हुई हैं- शान्ति और प्रीति। तुलसी ने ऐश्वर्य को तीन रूपों में निरूपित किया है-

1. **शौर्य -** राम में शौर्य का गुण सर्वोच्च मात्रा में पाया जाता है।
2. **शील -** इसकी प्रतिष्ठा तुलसीकाव्य में पदे-पदे परिलक्षित होती है।
3. **रूप सौन्दर्य -** इसका वर्णन सरसिजनयनम्, पाणौ बाणशरासनम्, पाणौ नाराचचापम् आदि विशेषणों द्वारा अनेकधा किया गया है।

तुलसी ने स्तुतियों में राम के माधुर्य का सर्वोत्तम संग्रह प्रदर्शित करते हुए भी उनमें शौर्य की सुन्दर प्रतिमा स्थापित की है। तुलसी कहीं भी धनुष-बाण नहीं भूलते और शीलसंग्रह से नहीं चूकते। राम में ब्रह्म बल तथा क्षत्र-बल का यथोचित समन्वय उनको उत्कट प्रकर्ष की ओर ले जाता है। शील से तुलसी राम के निकट पहुँचते हैं और शौर्य स्वयं तुलसी के व्यक्तित्व को प्रकाशित करता है।

सन्दर्भ -

1 रामचरितमानस, बालकाण्ड
2 श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, पृ. 371
3 श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, पृ. 371
4 मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददं,
वैराग्याम्बुजभास्करं ह्यघघनध्वान्तापहं तापहम्।
मोहाम्भोधरपूगपाटनविधौ स्वः सम्भवं शंकर,
वन्दे ब्रह्मकुलं कलंकशमनं श्रीरामभूपप्रियम्।। - अरण्यकाण्ड, 685
5 शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदम्
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिम्
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्।। - सुन्दरकाण्ड, पृ. 793
6 रामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड, पृ. 793
7 मानस 1016 उत्तरकाण्ड